विकास के बीज-मन्त्र : नम्रता और विनय

(जैनाचार्य श्रीमद्विजय जयन्तसेनसूरी श्वरजी महाराज)

जयवन्त जैन शासन

विश्व में जैन शासन जयवन्त है। यह शाश्वत सत्य है। जैन शासन की गहराई में जाकर यदि देखें तो इसमें सबसे बड़ी बात आत्मज्ञान की ही मिलेगी; क्योंकि जैनधर्म आत्मधर्म है। आत्मधर्म सदा जयवन्त है। आत्मा अमर है, इसलिये आत्मज्ञान भी अमर है और जयवन्त है। किसी ने कहा है: 'जब तक आत्मा है, तब तक ज्ञान भी है'। आत्मज्ञान की बात करने वाला जैन शासन सदा से विश्व का प्रेरक और उद्धारक रहा है। भौतिक विशेषताओं के कारण ही जैन शासन सब धर्मों में प्रधान और श्रेष्ठ नहीं है, वरन् अपने आध्यात्मिक ज्ञान और विशेषताओं के कारण ही वह सब धर्मों में प्रधान और श्रेष्ठ है। जो आध्यात्मिक विमर्श जैनधर्म ने किया है, वैसा किसी अन्य धर्म ने नहीं; इसीलिए कहा गया है –

सर्व मंगल मांगल्यं, सर्व कल्याण कारणम्।
प्रधानं सर्व धर्माणां जैनं जयति शासनम्॥

हमारी अपनी स्थिति

आत्मा के स्वभाव को-द्रव्य-गुण-पर्याय को-केवल जैन शासन ने ही विस्तारपूर्वक समझाया है। **उप्पन्नेइ वा, विगमेइ वा, धुवेइ वा-** इस त्रिपदी को ग्रहण कर गणधर भगवन्तों ने द्वादशांगी की रचना की है। द्रव्य की उत्पत्ति. विनाश और ध्रौव्य का विशद विवेचन करके पूर्व महर्षियों ने आपस में टकराने वाले अन्य दर्शनों में समझौता कराया है। ऐसा समन्वयवादी शासन हमें प्राप्त हुआ है, यह हमारा अहोभाग्य है। अब हमें अपनी स्थिति पर गौर करना है। इस शासन की छत्रछाया में बैठ कर हमें अपना जीवन-लक्ष्य निर्धारित करना है, अपनी वर्तमान स्थिति पर विचार करना है। जीवन के लक्ष्य को पूरा करने के लिए सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र की आवश्यकता है। पंच परमेष्ठी तो सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र के-रत्नत्रय के मूर्तरूप हैं; इसलिए यदि हम पंच परमेष्ठियों की शरण में जाएँगे तो हमें रत्नत्रय की प्राप्ति के साथ-साथ मंजिल भी प्राप्त हो जाएगी। हमारी स्थिति सुधर जाएगी।

भक्ति-भावमय आराधना

हम रोज नवकार मन्त्र जाप करते हैं, फिर हम उनके दर्शन से कोरे क्यों रह गये? हमें अब तक सम्यग्दर्शन, ज्ञान और चारित्र की उपलब्धि क्यों नहीं हुई? हम अब तक अंधेरे में क्यों भटक रहे हैं? कारण स्पष्ट है, हम केवल राम-राम बोल रहे हैं, परमेष्ठियों के साथ तन्मय नहीं हुए हैं। यदि हमें अपने जीवन में प्रकाश लाना है, तो परमेष्ठि भगवन्तों को भक्ति-भावपूर्वक भजना होगा। केवल तोता-रटन्त से काम नहीं चलेगा। कथनी और करनी में एकरूपता लानी होगी। परमेष्ठियों को पाने के लिए हमें गहराई में जाना होगा। हम अब तक

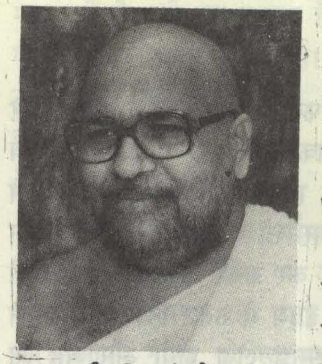

आचार्य श्री जयंतसेनसूरिजी

भीतर न पहुँच सके इसीलिए शब्द-केवल-शब्द बनकर ही रह गये। अब हमें अपनी यात्रा की दिशा बदलनी होगी।

नवकार मन्त्र

हम जिसकी आराधना कर रहे हैं, वह नवकार मन्त्र है। उसमें पंच परमेष्ठि भगवन्तों को नमस्कार किया गया है, अत: इसे नमस्कार मन्त्र भी कहते हैं। शास्त्रीय भाषा में इसे पंच मंगल महाश्रुतस्कंध भी कहते हैं। सरल भाषा में इसे नवकार मन्त्र कहते हैं। यह चौदह पूर्वों का; समस्त जैनशास्त्रों का सार है।

नवकार मन्त्र में रही हुई परमेष्ठियों के प्रति नमनपूर्वक संपूर्ण समर्पण की भावना को यदि हम ध्यान में लें, तो हमें यह प्रतीत होगा कि 'नवकार' के समान मंगलकारक अन्य कोई है ही नहीं। यह सब प्रकार के पाप कर्मों का नाश करने वाला, सब अमंगलों को दूर करने वाला प्रथम मंगल है –

एसो पंच नमुक्कारो, सव्व पावप्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं॥

जब ऐसा है, तब फिर आज तक हम इसे क्यों नहीं पा सके? नवकार अब तक हम से दूर क्यों रहा? कारण स्पष्ट है, हम नवकार के इर्द-गिर्द ही चक्कर लगाते रहे। नवकार के भीतर कभी हमने प्रवेश ही नहीं किया। जो कुछ है सो नवकार के भीतर है, बाहर कुछ भी नहीं है। और हम हैं, जो केवल बाहर ही ढूँढ़ते हैं, भीतर प्रवेश ही नहीं करते। फिर हम पायें कैसे? नवकार को पाने के लिए हमें भीतर तक जाना होगा। जितनी गहराई तक हम जाएँगे, उपलब्धि उतनी ही हमारे नजदीक होगी।

मन्त्र-शिरोमणि

नवकार मन्त्र मन्त्र-शिरोमणि है - मन्त्राधिराज है। मन्त्र जीवन में आने वाले संकट दूर करता है; पर यह मन्त्राधिराज तो संकट के मूल कारण पाप को ही समूल नष्ट कर देता है। यह सव्वपावप्पणासणो है। यह नवपदात्मक या अड़सठ अक्षरात्मक होते हुए भी - छोटा-सा होते हुए भी, महान् है। जीवन के समस्त अभाव दूर करने वाला है। आत्मतत्त्व और परमात्मत्त्व का ज्ञान कराने वाला है। संसार में ऐसा कुछ भी नहीं है, जो इसकी शक्ति से परे हो। ऐसा कोई रोग नहीं है, जो इससे दूर न हो। नवकार मन्त्र आधि-व्याधि और उपाधिजन्य समस्त संतापों का नाश करता है। यह भवरोग-विनाशक है।

अविरति अरु मिथ्यात्व है, कषाय योग प्रमाद ।
जयन्तसेन तजे बिना, जीवन हो बरबाद ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नवकार हमें जीवन-बोध कराता है, परमात्मा तक पहुँचने की दूरी कम करके हमारा सम्बन्ध परमात्मा तक जोड़ता है। जगत्भाव से दूर ले जाकर वह हमें आत्मभाव से जोड़ता है। नवकार मन्त्र लक्ष्य-बोध द्वारा हमें लक्ष्य तक पहुँचाता है। यह हमें भटकने से बचाता है। हमारे चाल-चलन में सुधार लाता है और हमारे जीवन का स्पष्ट लेखा-जोखा हमारे सामने रख देता है। ये पाँचों परम इष्ट है।

परम इष्ट की प्राप्ति

इष्ट और परम इष्ट में फर्क है। हमारे अन्य इष्ट जन-संसारी/सम्बन्धी हमें धोखा दे सकते हैं; पर ये परम इष्ट पंच परमेष्ठी कभी धोखा नहीं देते। ये तो हमारे आत्मविश्वास को जाग्रत करके हमारा आत्मबल बढ़ाते हैं। पंचपरमेष्ठी भगवान् हमारे पूरे जीवन को बदल सकते हैं; हमारा कायाकल्प कर सकते हैं; किन्तु यह तभी हो सकता है, जब नवकार को अपने हृदय में उतार लें। इससे पहले हमें इसके स्वरूप को अच्छी तरह समझ लेना होगा और यह जो कहता है, उसे मानना होगा। इसे पाने के लिए जगत्-भाव का त्याग करना होगा और 'नवकार-भावों' को पकड़ना होगा।

नवकार-भाव अपने में आते ही सभी प्रकार के दुर्भाव हमें छोड़ जाएँगे। दुर्भावों की डकैती का डर फिर हमें नहीं होगा। हम में नवकार-भाव का अभाव है, इसीलिए दुर्भावना हमारे भीतर समायी हुई है। हमारे जीवन में सद्विचारों की गंगा प्रवाहित होनी चाहिये; यह तभी संभव होगा, जब हम नवकार को अपने भीतर प्रतिष्ठित कर लेंगे। यदि ऐसा नहीं हुआ, तो नवकार के अभाव में हमारे जीवन में केवल कुविचारों की अस्वच्छ नाली प्रवाहित रहेगी और हमारा सारा जीवन विकृत हो जाएगा।

इसलिए नवकार के हर अक्षर, हर पद और हर भाव को हम विचारपूर्वक समझें और उसके निकट जाएँ। यदि ऐसा हुआ, तो अवश्य ही परम इष्ट की प्राप्ति हुए बिना नहीं रहेगी। हमें अपना अधिकृत स्थान अवश्य प्राप्त होगा।

गन्तव्य कहाँ है?

आज हमारा स्थान ही कहाँ है? हम जहाँ हैं, अस्थिर हैं। हम मान लेते हैं कि हमें स्थान मिल गया; पर है हमारा यह भ्रम। हमारा स्थान स्थायी नहीं है। इस संसार में किसी का भी स्थान स्थायी नहीं है। सभी अस्थिर है। भले ही घर का मालिक या देश का मालिक कोई बन गया हो; पर वह वहाँ स्थायी रूप से दिखायी नहीं देता।

किसी का भी स्थान स्थायी नहीं है घर में रहने वाला घर छोड़ता है भागा-भागा बाजार जाता है। बाजार में गया हुआ भागा-भागा घर लौटता है। उसका सही स्थान कहाँ है? दूकान है या घर है? कोई घर से परदेस जाता है तो कोई परदेस से घर आता है। है कहाँ ठिकाना? जरा इन सब से पूछो तो सही!

भटकाव कैसा?

इस संसार में जहाँ देखो वहाँ सब प्राणी भटकते नजर आ रहे हैं; क्योंकि उन्हें अभी तक अपना अधिकृत स्थान नहीं मिला। अपना स्थान मिल जाए, तो फिर गमनागमन और आवागमन रुक सकता है, पर हम हैं कि बिना पते के आगे बढ़ रहे हैं। गन्तव्य की जानकारी ही नहीं है, न पता है और न मुकाम।

अपना पता लगाने के लिए और अपना मुकाम पाने के लिए हमें इन परमेष्ठि भगवन्तों के निकट पहुँच कर इनका आलंबन लेना होगा, क्योंकि परमेष्ठियों का स्थान निश्चित है। स्थान तो उसका अनिश्चित है, जो इनके निकट नहीं आ पाया। यदि हमें अपने सही और स्थायी स्थान पर पहुँचना है, तो इन परमेष्ठियों को पहचानना अत्यन्त आवश्यक है।

परमेष्ठी भगवंतों के निकट जाना अपने सही और स्थायी स्थान को पाना है। उनके निकट जाते ही हमारे भटकाव का अन्त हो जाएगा। जो परमेष्ठियों से दूर रहे, वे संसार में भटक गये और जो परमेष्ठियों के निकट आ गये, वे अपना भटकाव भूल गये।

चक्की : एक पाट पाप, एक पाट पुण्य

संसार एक चक्की है। पुण्य और पाप उस चक्की के पाट हैं। परमेष्ठियों से जो दूर हुआ, वह पाप-पुण्य के इन दो पाटों के बीच पिस जाएगा। उसका संसार-भ्रमण जारी रह जाएगा। परमेष्ठियों के सान्निध्य में रहने वाला संसार भ्रमण से बच जाएगा; क्योंकि वह पुण्य और पाप के परे हो जाएगा।

परमेष्ठी : बीच की कील

आटे की चक्की आपने देखी है। उसमें दो पाट होते हैं। बीच में एक कील होती है। ऊपर से अनाज डाला जाता है। चक्की घूमती है और अनाज पिस जाता है। आपको मालूम होगा कि चक्की में डाले जाने के बावजूद भी कुछ दाने सुरक्षित रह जाते हैं। ऐसा क्यों हुआ? ऐसा इसलिए हुआ, क्योंकि वे दाने कील के बिलकुल निकट रहे। कील के निकट रहने वाले दाने पिसने से बच गये। तो जो कील के निकट रहता है, उसकी रक्षा होती है और जो कील से दूर रहता है वह पीसा जाता है। कील के पास रहने वाला चक्कर में नहीं आता।

तो, जो परमेष्ठी भगवंतों की शरण में जाता है, वह इस भव-भ्रमण-रूप संसार-चक्की में नहीं पीसा जाता। परमेष्ठी भगवन्त इस जगत् के बीच कील-तुल्य है। हम भी यदि उनकी शरण ले लें. तो फिर संसार की चक्की चाहे जितनी चले, हम उसमें अधिक समय तक पीसे नहीं जाएँगे। जल्दी ही हमारे भव-भ्रमण का अन्त हो जाएगा।

जप : आत्म-परिणमन

पंचपरमेष्ठी नमस्कार-मन्त्र परम मंगलमय है। हमें नवकार के भीतर भावात्मक रूप से प्रवेश करना चाहिये। जो भावात्मक रूप से नवकार नहीं जपता, उसका कर्म भी नहीं खपता। खपेंगे उसी के, जो जपेगा। जो सावधान होकर काम करेगा, उसी का काम होगा।

हमारा जपना कैसा है? केवल ओठ हिलते हैं, पर हृदय आन्दोलित नहीं होता। उसमें आत्मा के परिणाम नहीं मिलते। आत्मा के परिणाम तो उसमें तब मिलेंगे, जब हम नवकार को सम्यक् रूप

लोभ मोह मद वासना, सभी नरक के द्वार ।
जयन्तसेन तजो सदा, बढ़े नहीं संसार ॥
Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

से समझ लेंगे। नवकार में प्रवेश करना है, तो नवकार का शुद्धोच्चार करें।

'नमो अरिहंताणं' में 'नमो' प्रारंभ में है और 'अरिहंताणं' अन्त में है। पहले 'नमो' है। ऐसा क्यों है? कारण अरिहंत तक पहुँचने के लिए 'नमो' आवश्यक है। बिना 'नमे' अरिहन्त प्राप्त नहीं होंगे। किसी भी चीज को पाने के लिए झुकना पड़ेगा। जमीन पर यदि कुछ गिर गया है, तो उसे लेने के लिए झुकना पड़ता है; फिर अरिहन्त परमात्मा जैसे परम इष्ट झुके बिना कैसे प्राप्त होंगे? कभी प्राप्त नहीं होंगे। 'नमो अरिहंताणं' इसीलिए कहा गया है।

अरिहंत : सर्वबन्धन-मुक्त

'नमो' बोलते हैं, तब तक 'अरिहंताणं' नहीं; पर 'नमो' के बाद 'अरिहंताणं' बोलिये। ऐसी आदत डालिये, फिर आपको स्थान मिल जाएगा। यदि 'नमो' को छोड़ दिया और केवल 'अरिहंताणं' रटते रहे तो काम नहीं चलेगा। 'अरिहंताणं' के पहले 'नमो' चाहिये ही।

अरिहन्त भगवान् जो हैं, वे समस्त बन्धनों से मुक्त हो चुके हैं। उन्होंने चारों घाती कर्मों का क्षय कर लिया है। आत्मा के मूल गुणों -अनन्तज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त वीर्य और अनन्त सुख का जो घात करे, वह घाती कर्म है। ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय, और अन्तराय ये चारों आत्मा के मूल गुणों का घात करते हैं इसलिए इन्हें घाती कर्म कहते हैं। अरिहन्त परमात्मा ने इन चारों घाती कर्मों का नाश कर दिया है; इसलिए वे अनन्त चतुष्टय से युक्त हैं।

इन घाती कर्मों का नाश उन्होंने कैसे किया? तीर्थंकर पद प्राप्त करने के पहले विगत जन्म में उन्होंने दर्शन-विशुद्धि, विनय-संपन्नता आदि सोलह कारणों की साधना की थी। उन्होंने स्वयं अपने जीवन में 'नमो' पद की साधना की थी। भगवान् भी जब गृहस्थ धर्म को त्याग कर साधु धर्म को स्वीकार करते हैं और महाव्रत ग्रहण करते हैं, तब नमो सिद्धाणं बोलते हैं। यह 'नमो' शब्द बड़ा जानदार है। 'नमो' के बिना कोई कार्य सिद्ध नहीं होता। 'नमो' का भाव जब तक जीवन में नहीं आता; तब तक संसार का चक्कर अटल है।

'नमो' : जीवन की नींव

जीवन में यदि नमन का भाव नहीं आया, तो जीवन निरर्थक हो जाएगा। 'नमो' तो हमें जीवन में हर जगह 'नमना' सिखाता है। 'महाबल देखा जरा सीस के झुकाने में'। यह सच है, जिसने सिर झुका लिया, उसने सब कुछ जीत लिया। झुकने वाला बच गया और अकड़ने वाला टूट गया। आपको मालूम होगा, जब आँधी आती है, तब बड़े-बड़े पेड़ चरमरा कर टूट जाते हैं, पर घास के तिनके बच जाते हैं। ऐसा क्यों होता है? इसलिए कि पेड़ अकड़े रहते हैं, टूट जाते हैं; तिनके झुक जाते हैं, बच जाते हैं। झुकने से रक्षा हो सकती है; इसलिए 'नमो' व्यवहार में भी जीवन का आधार है।

नमो = नम्र बनो

हम रोज 'नमो' 'नमो' रटते हैं, पर जब नमने का मौका आता है. तब अकड़ जाते हैं। जीवन में हम नमते नहीं हैं। यथावसर अवश्य नमना चाहिये। जो नम नहीं सका, उसने 'नमो' सीखा ही नहीं। 'नमो' शब्द हमें विनम्र बनने का संदेश देता है, विनम्र बनने की प्रक्रिया समझाता हैं। यदि अरिहन्त को पाना है, प्रकाश को पाना है, सत्य को और अमरत्व को पाना है; तो विनीत बनना होगा। विनम्रता से ही अरिहन्त परमात्मा का सामीप्य प्राप्त होगा।

'न' अर्थात् नहीं और 'मो' अर्थात् मोह। जिसमें मोह-ममत्व मान नहीं है वही नम सकता है, झुक सकता हैं। उसी के जीवन में परमेष्ठी आलम्बन बन जाते है। यदि ममता-भाव नहीं हटा, राग-भाव नहीं हटा तो चाहे जितना 'नमो, नमो' रटते जाओ, वह कोरा शब्दोच्चार होगा।

केवल पर्ची नहीं

मान लीजिये, आप बीमार हो गये और डॉक्टर के पास गये। डॉक्टर ने आपकी जाँच की और नुस्खा दे दिया। आप घर आये और रोज उसे पढ़ते रहे। आप बहुत प्रसन्न हो रहे हैं, नुस्खे को पढ़ कर। आपने नुस्खे को सम्हाल कर तिज़ोरी में रख दिया है। क्या उस नुस्खे को केवल पढ़ कर आपका रोग दूर हो जाएगा? नहीं, ऐसा कभी नहीं होगा। रोग दूर करने के लिए नुस्खे में लिखी दवाई आपको लेनी ही पड़ेगी और पथ्य-पालन करना पड़ेगा. तब कहीं आपका रोग दूर होगा। परचा पढ़ने मात्र से बीमारी थोड़े ही दूर हो जाती है। डॉक्टर कितना भी अच्छा क्यों न हो, नुस्खा कितना भी रामबाण क्यों न हो, पर जब तक दवाई का सेवन नहीं किया जाएगा, रोग दूर नहीं होगा।

आप कहते हैं हमें भी 'नमो अरिहंताणं' बोलते-बोलते बहुत समय हो गया। आप मानते हैं कि हममें नवकार मन्त्र के प्रति श्रद्धा है, आस्था है। पर भाई! तुम्हारा यह विश्वास तभी सही माना जाएगा, जब 'नमो' को सीख लेंगे और जीवन में उतार लेंगे। हमें अहंकार के शिखर से नीचे उतरना है। परमेष्ठी भगवन्त हम से महान् हैं। उन परमेष्ठियों के आगे हम अहंकार के पहाड़ पर बैठ कर अपनी ऊँचाई कम नहीं कर सकते। उनके चरणों में शरणागति पाने के बाद ही ऊँचाई कम होगी, जीवन धन्य होगा।

'नमो' बदले 'ममो'

मोह घटेगा तो 'नमो' अवश्य ही जीवन में सार्थक हो जाएगा। यदि ऐसा नहीं हुआ और 'नमो' का विस्मरण हो गया तो नमो तो छूट जाएगा और 'ममो' जीवन में आ जाएगा। यह ममो क्या है? 'म' यानी ममता और 'मो' याने मोह; अर्थात मेरी ममता और मेरा मोह। बस ममता और मोह ही शेष रह जाएगा। और तब आत्म-स्वभाव तिरोहित हो जाएगा। ऐसा न हो, इसलिए 'नमो' सिखाया गया है। बस, आप नमो को अपने जीवन में उतार लो, झुकते जाओ, नमते जाओ; आप अपने-आप अरिहन्त की शरण में स्थान पा जाओगे। यदि नमे नहीं, अकड़े ही रहे, तो फिर ऊँचे उठने का प्रसंग नहीं आयेगा।

छोटे बनो, बड़े झुकेंगे

आपको मालूम है, कई बार जब, मकान का द्वार छोटा होता

कपट मित्रता संग में, रहे नहीं संसार ।
जयन्तसेन कपट रहित, सन्मति सार्थक सार ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है, तब अन्दर प्रवेश करने वाले उसमें झुक कर प्रवेश करते हैं। दरवाजा तो पहले से ही झुका हुआ है, इसीलिए यदि कोई भी बड़ा आदमी घर में प्रवेश करेगा, तो वह भी झुक कर ही प्रवेश करेगा; अतः जो पहले से ही छोटा हो जाता है, उसके सामने बड़े-से-बड़ा भी छोटा हो जाता है। आपके सामने आने वाला व्यक्ति आईना है। उसमें आपका ही प्रतिबिम्ब झलकेगा। आप तनेंगे, वह भी तनेगा; आप झुकेंगे, वह भी झुकेगा-झुके बिना नहीं रहेगा।

अतः यदि हम नम्र बनेंगे, तो हमारा आत्मिक विकास अवश्य ही होगा और हमारी नम्रता हमें परमेष्ठी भगवन्तों तक ले जाएगी, जो हमारी मंजिल है।

नमो अर्थात् केवल नमस्कार नहीं

हम 'नमो अरिहंताणं' बोलते हैं। इसका मतलब केवल अरिहन्त परमात्मा को नमस्कार मात्र नहीं है। इसमें अरिहन्त परमात्मा को नमस्कार तो है ही; साथ में अहंकार का त्याग भी है। इसमें समता का भी समावेश है। समता आये बिना नमन कैसे होगा? समता में अहंकार का त्याग तो होता ही है, साथ ही सब जीवों के प्रति समान भाव भी होता है। न किसी के प्रति राग और न किसी के प्रति द्वेष। समता में तो **मित्ति में सव्वभूएसु** प्राणिमात्र के प्रति मैत्री का भाव समाया हुआ है।

'नमो' का उल्टा

महामन्त्र नवकार का संदेश झुकने का संदेश है। यदि आप नहीं झुक सकते हैं. तो कोई बात नहीं; पर सामने वाले की बात सुन तो लीजिये। किसी की पूरी बात सुन लेना भी एक शिष्टाचार है। आप यदि 'नमो' को आचरण में नहीं ला सकते तो कम-से-कम नमो का उल्टा रूप ही आचरण में लाइये। जानते हैं; नमो का उल्टा क्या होता है? नमो का उल्टा होता है 'मोन' अर्थात् 'मौन'। बस आप मौन रह जाइये। यदि नमो याद नहीं रहे, तो मौन रह जाइये। पर अन्त में परमेष्ठी भगवन्तों की निकटता पाने के लिए 'नमो' को तो सीखना ही पड़ेगा। उसे सीखे बिना काम चलेगा ही नहीं।

नम्रता और विनय जीवन-विकास के मन्त्र हैं। ज्ञानी कहते हैं, झुको, ज्यादा-से-ज्यादा झुको; इतने झुको कि सामने वाले का दिल पसीज जाए। हमें ज्ञानियों की बातों पर विश्वास करना चाहिये। जगत् की बात पर भरोसा करेंगे, तो जगत् में ही उलझे रहेंगे और यदि ज्ञानी की बात पर भरोसा करेंगे तो ज्ञानवन्त हो जाएँगे; क्योंकि ज्ञानी परम आप्त है; वह वीतराग, सर्वज्ञ और केवल हितोपदेशी हैं। उनकी वाणी संसार-सागर से बेड़ा पार कर देगी। जगत् जीव को उलझाता है; ज्ञानी जीव को पार लगाता है। ज्ञानी गुरु परम करुणामय होते हैं। वे जीव के भले की ही बात बोलते हैं। कहा गया है —

जे त्रिभुवन में जीव अनन्त, सुख चाहैं दुखतैं भयवन्त।
तातैं दुखहारी सुखकारी, कहै सीख गुरु करुणा धारि॥

ज्ञानी गुरु ही हमें मंजिल तक-पंच परमेष्ठियों तक ले जाएँगे।

परदेशी और स्वदेशी

इस संसार में सभी परदेशी हैं, स्वदेशी कोई नहीं। भारतीय भारत छोड़ कर अन्यत्र जाता है तो वह परदेशी माना जाता है और अन्य देश से कोई भारत में आता है तो वह भी परदेशी माना जाता हैं. तो यहाँ सब परदेशी हैं, स्वदेशी कोई नहीं। स्वदेश हमारा छूट गया है। उसे पाने के लिए ही तो यह सारा प्रयत्न है। स्वदेश इसलिए पाना है; क्योंकि स्वदेशियों में भिन्नता नहीं होती। वे सब समान होते हैं। स्वदेश में-मोक्ष में- असमानता होती ही नहीं। संसार पराया देश है अतः इसमें असमानता ही है; इसीलिए संसार में दुःख है और मोक्ष में सुख।

स्वदेश चलें

परमेष्ठी भगवान् तो स्वदेश पहुँच चुके हैं; इसलिए उनमें किसी प्रकार का भेद-भाव नहीं हैं। परदेश अपना नहीं है; हमारा यहाँ रहना उचित नहीं हैं। हमें स्वदेश की ओर चलना चाहिये। चलो, हम स्वदेश की ओर चलें। यह तो परदेश है, यहाँ कभी भी तूफान आ सकता है यदि तूफान आ गया, तो उसमें हमारा बलिदान हो जाएगा; क्योंकि यहाँ हम परदेशी हैं। यहाँ खतरा-ही-खतरा है; दुःख-ही-दुःख है और केवल मात्र चतुर्गति में भटकना है; अतः यहाँ रहना इष्ट नहीं है। स्वदेश चलो। वहाँ कोई खतरा नहीं है कोई भटकाव नहीं है।

दृढ़ संकल्प : मुश्किल भी आसान

स्वदेश-गमन का मार्ग कठिन जरूर है; पर यदि संकल्प दृढ़ हो, तो कठिन मार्ग भी सरल बन जाता है। स्वदेश के मार्ग में संकल्पपूर्वक प्रयाण करो; कठिनाइयाँ दूर होती जाएँगी। दृढ़ संकल्प करने वाला व्यक्ति आधी मंजिल तो पहले ही तय कर लेता है।

यहाँ से अपने घर जाना हो, मारवाड़ जाना हो, तो रास्ते में कितनी तकलीफें हैं! लोग घर जाकर कहते हैं - गाड़ी में इतनी भीड़ थी कि खड़े रहने को भी मुश्किल से जगह मिली। गाड़ी में लोगों के धक्के खा-खा कर बड़ी मुश्किल से किसी तरह घर पहुँचे हैं और राहत की साँस ली है।

घर जाना था, तो धक्के भी खा लिये और अनेक मुसीबतें भी सहन कर लीं; पर यहाँ धक्का दें, तो फिर वापिस कभी अन्दर ही नहीं आयें। गाड़ी में बार-बार धक्के खाने पर भी अंदर घुसने का प्रयत्न करेंगे पर यहाँ धक्का खायेंगे तो बाहर ही रह जाएँगे। अन्दर नहीं आयेंगे।

गाड़ी की तकलीफ़ महसूस क्यों नहीं होती? इसलिए कि हममें घर जाने की उमंग है। अपने गाँव जाने का सुदृढ़ संकल्प है। यह उमंग, यह दृढ़ संकल्प गाड़ी की भीड़-भाड़ तकलीफ़ महसूस नहीं होने देती। हम अपने गाँव अवश्य पहुँच जाते हैं।

जहाँ परमेष्ठी, वहाँ स्वदेश

पंच परमेष्ठी भगवान् स्वदेश पहुँच चुके हैं। हमें भी उन परमेष्ठियों के पास पहुँचना हैं। हमारा भी स्वदेश वही है। उस देश की ओर जाने में कठिनाइयाँ तो आयेंगी ही। इतना ही नहीं, हमें त्याग भी करना होगा और साथ में आत्म विश्वास भी जगाना होगा। मार्ग की बाधाओं से डर कर बीच में ही रुक जाने का मन हो सकता है, पर हमें रुकना नहीं हैं। जब तक मंजिल प्राप्त नहीं होती, हमें चलते रहना है, किसी भी तरह अपनी मंजिल को पाना है।

काम क्रोध मद लोभ की, दिल में लगी दुकान ।
जयन्तसेन हुआ सदा, नष्ट भ्रष्ट ईमान ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यहीं रह जाएगा सब कुछ

तो कहते हैं, परमेष्ठी भगवान् स्वदेश प्राप्त कर स्वदेशी हो गये, पर हम अभी तक परदेशी ही हैं। अब, जब तक अपना उनसे संबन्ध नहीं जुड़ता, तब तक तो परदेश में ही भटकना है। परदेश में तो केवल भटकना ही पड़ता है; वहाँ कोई ठौर-ठिकाना थोड़े ही होता है। पराये देश में आप अपना निवास-स्थान भले ही बना लें पर आखिर आप हैं तो परदेशी ही। जब कभी वहाँ से भागना पड़ेगा तो सब कुछ वहीं धरा रह जाएगा. अफ्रीका में क्या हुआ; आप जानते ही होंगे। सभी विदेशियों को वहाँ से खाली हाथ भागना पड़ा। जो जमा किया था; सब वहीं रह गया। पाकिस्तान निर्मित होते ही वहाँ के हिन्दुओं के लिए वह विदेश हो गया। बेचारे हिन्दुओं को वहाँ से जान बचाने के लिए सब धन-दौलत वहीं छोड़ कर भारत की ओर भागना पड़ा। तो यह हाल है स्वदेशियों का परदेश में।

दोनों बुरे

बेचारे परदेश में रहने वाले आँसू लेकर स्वदेश लौटे, खुशी लेकर नहीं। आदमी परदेश ले भी क्या जा सकता है अपने साथ! वे लोग अपनी सम्पत्ति दूसरे देश में क्यों जाने देंगे? परदेश में परदेशियों के लिए हम कुछ भी करें, पर अन्त में जब देश छोड़ने का समय आता है, सब निरर्थक हो जाता है; अतः जहाँ तक हो सके, हमेशा स्वदेश का ही ध्यान रखना चाहिये, स्वदेश की ही सेवा करनी चाहिये।

पर हम तो परदेश में हैं और यहाँ से कभी-न-कभी तो स्वदेश जाना ही है; इसलिए हमारा जो धर्म-धन है, उसे पूरी तरह सम्हाल लेना है। धर्म-धन अर्जित संपत्ति है। उस पर केवल हमारा ही अधिकार है, इसलिए उसकी पूरी तरह से रक्षा करनी चाहिये। यह धर्म-धन बड़ा कीमती है।

'नवकार' क्या सिखाता है?

तो, स्वदेश लौटते वक्त हमें हमारा कीमती माल सम्हाल लेना चाहिये। 'आत्मज्ञान और महामन्त्र की आराधना' बड़ा कीमती माल है। यह साथ में ही चलेगा। छूटेगा नहीं। ऐसी कोई ताक़त नहीं है, जो इसे हमसे छीन सके। यह महामन्त्र नवकार आत्म-धन का दर्शन कराने वाला है, जीवन को वैभव-संपन्न बनाने वाला है और आत्मिक वैभव को प्राप्त करने का मार्ग बताने वाला है। ऐसा यह महामन्त्र नवकार जब जीवन में प्राप्त हुआ है, तो इसकी गहराई में जाकर हमें सोचना चाहिये कि नवकार क्या सिखाता है?

हम हमेशा सांसारिक विचारों में उलझे रहते हैं। हमारा चिन्तन संसार–सम्बन्धी बातों का ही होता है। हम इस महामन्त्र का चिन्तन नहीं करते। यदि हम इस महामन्त्र का जरा-सा भी चिन्तन करें और इसके मुख्य द्वार 'नमो' से इसके भीतर प्रवेश करें, तो हमें उसमें अवश्य ही अपने मन के परिणामों का दर्शन होगा। हम यह जान जाएँगे कि हमारी अपनी स्थिति कैसी है? यदि हम नवकार मन्त्र को शुद्ध हृदय से जपना शुरू करेंगे, तो अवश्य ही अल्प समय में हमें इस महामन्त्र की शक्ति का अचूक अनुभव हो जाएगा। यह नवकार हमारे हृदय-पटल पर अंकित हो जाएगा।

चित्रकार / विचित्रकार

एक बार राजा कपिल के सामने दो कलाकार उपस्थित हुए। एक था चित्रकार, दूसरा विचित्रकार। राजा ने चित्रकार से अपने महल की एक दीवार पर चित्र बनाने के लिए कहा। उसके ठीक सामने वाली दीवार विचित्रकार को दी गयी और कहा गया कि तुम भी इस दीवार पर अपनी विचित्र कारीगरी दिखाओ।

दोनों का काम शुरू हुआ। दोनों कलाकारों के बीच पर्दा था। दोनों ने अपना काम शुरू किया। चित्रकार ने सबसे पहले अपनी दीवार साफ की और फिर उसे चित्रांकित करना शुरू किया; पर विचित्रकार बड़ा विचित्र था। वह तो उस दीवार को घिसता रहा। लगातार घिसे जाने के कारण वह दीवार इतनी चिकनी हो गयी मानो दर्पण ही हो। फिर उस विचित्रकार ने उस पर कोई ऐसा रसायन लगाया, जिससे वह दीवार बिल्कुल दर्पण का काम देने लगी।

दोनों का काम पूरा हुआ। राजा उनका काम देखने गया। चित्रकार ने अपनी कला से उस दीवार पर बड़े सुन्दर दृश्य प्रस्तुत किये थे। चित्रकार की कारीगरी देख कर राजा बड़ा प्रसन्न हुआ।

फिर राजा विचित्रकार के पास गया। दीवार देखकर राजा ने उससे पूछा, तेरी दीवार कोरी कैसे रह गयी? तूने अभी तक इस पर कोई दृश्य प्रस्तुत नहीं किया।

तब विचित्रकार बोला - 'महाराज! मैंने अपना दिमाग लड़ा कर बड़ी बुद्धिमानी से काम किया है, पर आप देख ही नहीं रहे हैं।'

राजा बोला - 'क्या बकता है? दीवार पर तो कुछ भी दिखायी नहीं देता।'

इस पर विचित्रकार बोला - 'महाराज! इस दीवार पर कुछ है। यह दीवार बिल्कुल सामने वाली दीवार जैसी ही है।'

यह कहकर उसने दोनों दीवारों के बीच का पर्दा हटा दिया। राजा ने आश्चर्य से देखा, सामने वाली पूरी दीवार अपने समस्त दृश्यों समेत विचित्रकार के हिस्से की दीवार में प्रतिबिम्बित हो रही थी। राजा तो बस देखता ही रहा गया। कितनी सुन्दर बन गयी थी वह दीवार!!

राजा ने दोनों कलाकारों को उचित पारितोषिक से सम्मानित कर बिदा किया।

तो पंचपरमेष्ठी भगवान् सामने वाली दीवार पर है। हमें उस विचित्रकार की तरह अपने मन को परमेष्ठी भगवन्तों के स्मरण द्वारा इतना घिस लेना है कि वे स्वयं इसमें प्रतिबिम्बित हो उठें; यही सर्वोत्तम कारीगरी होगी।

ओम् / सब मंत्रों का मूल

यदि परमेष्ठी भगवन्त अपने मानस-पटल पर प्रतिबिम्बित नहीं हुए हैं, तो समझ लेना कि अभी तक न तो हम चित्रकार बन सके हैं और न विचित्रकार। हम अपना जीवन यूँ ही खोये जा रहे हैं। किसी ने बिल्कुल ठीक कहा है –

रात गँवाई सोय कर, दिवस गँवाया खाय।
हीरा ज्यों मानव जनम, कौड़ी बदले जाय॥

ईर्ष्या आग प्रचंड है, करे सदा बेचैन ।
जयन्तसेन तजो इसे, पावो सुख अरु चैन ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसलिए अपने जीवन को व्यर्थ ही नष्ट मत करो। महामन्त्र की आराधना करके अपने जीवन को सौभाग्य से भर दो। जीवन का कोई भरोसा नहीं है। यह तो पानी के बुलबुले के समान है, जो फूटते ही नष्ट हो जाता है। कोई भाग्यशाली जीव ही इस महामन्त्र की आराधना कर सकता है।

श्वासोच्छ्वास में जिन भजो, वृथा श्वास मत खोय।
ना जाने फिर श्वास का, आना होय न होय॥

इस संसार में नवकार मन्त्र को छोड़कर अन्य कुछ भी सारभूत नहीं है। कोई भी मन्त्र आप लीजिये, उसके प्रारम्भ में आपको ओम् ही दिखायी देगा। और यह ओम्कार तो संपूर्ण नवकार मन्त्र का संक्षिप्ततम रूप है। तो ओम् के अभाव में किसी भी मन्त्र की गाड़ी आगे नहीं बढ़ सकती, इसीलिए ओम्कार उस मन्त्रगाड़ी के लिए इंजिन स्वरूप है। गाड़ी का सब से महत्त्वपूर्ण भाग इंजिन ही होता है। उसके अभाव में गाड़ी आगे बढ़ ही नहीं सकती। इंजिन चलेगा तो गाड़ी भी चलने लगेगी। ओम्कार होगा-नवकार होगा तो ही अन्य मन्त्र सफल होंगे। हम इस इंजिन की देख-भाल करें तो हमारी जीवन-गाड़ी भी मंजिल तक चलती रहेगी।

ओम्कार बना कैसे

मैंने पहले ही बता दिया है कि 'ओम्कार' नवकार का सारांश है अर्थात् ओम्कार मूल है और पंच परमेष्ठी उसका विस्तार। ओम्कार बिन्दु है और पंच परमेष्ठी सिन्धु। यहाँ बिन्दु में सिन्धु समाया हुआ है।

अरिहंत, अशरीरी (सिद्ध), आचार्य, उपाध्याय और मुनि (साधु) ये पाँच परमेष्ठी हैं। इन पाँचों के आद्य अक्षर इस प्रकार हैं - अ + अ + आ + उ + म्। इन पाँचों की संधि होने पर ओम् बनता है - अ + अ + आ = आ; आ + उ = ओ; और ओ + म् = ओम् अर्थात् ओम्।

यह ओम् हर मन्त्र का प्रारम्भ है। लोग सोचते हैं कि अन्य मन्त्रों से भी काम सिद्ध हो सकता है। अन्य मन्त्रों से भी काम होगा क्योंकि उनके प्रारम्भ में ओम् है। यदि इस ओम् को हटा दिया जाए तो फिर वह मन्त्र मन्त्र नहीं रहेगा; केवल शब्द-समुच्चय रह जाएगा। तो भाई! इस महामन्त्र ओम् को समझ लेना है और सिद्ध करना है। ओम् प्राप्त हो गया कि सभी मन्त्र प्राप्त हो गये।

जनम-जनम का साथी

यह नवकार मन्त्र तो जनम-जनम का साथी है. बेसहारों का सहारा है। यह निर्बलों को बल प्रदान करता है, निराशा में आशा की प्रकाश किरण फैलाता है, शरीर को रोग-मुक्त करता है और तो क्या, यह इस जीव को भव-रोग से मुक्त भी करता है ये पंच परमेष्ठी भव-रोग के वैद्य हैं। इनका इलाज रामबाण इलाज है - एकदम अचूक इलाज है; इसलिए नवकार से घड़ी-भर का नहीं जन्म-भर का सम्बध बना लो।

मधुकर मौक्तिक

हे देव! आप महागोप हैं। राग द्वेषादि की प्रत्येक विपरिणति का आपने संपूर्ण दमन किया है। चतुर्गति में भ्रमण करनेवाले जीवों को आप कुशल गोपालक के समान स्व स्थान की तरफ ले जानेवाले हैं। गोपालक पशुओं को हरेभरे जंगल में ले जाता है और वहाँ भी हिंसक जानवरों से उसकी रक्षा करता है, इसी प्रकार आप भी षटकाय के जीवों को आत्मविकास की हरियाली की ओर ले जाते हैं और कषायादि हिंसक जन्तुओं से उनकी रक्षा करते हैं।

हे देव! आप महामाहण भी हैं। इस संसार में सब जीव दुःखी हो रहे हैं। प्रत्येक जीव सुखमय जीवन जीने की इच्छा रखता है। दुःख कोई नहीं चाहता। ऐसी स्थिति में 'मा हण'—'मत मारो' का उद्घोष करनेवाले मात्र आप ही है। आप निराधार के आधार हैं। वीतराग होते हुए भी जीवमात्र को जीने का अधिकार प्रदान करने वाले आप हैं। आप तो बस आप ही हैं। आपसा अन्य कोई नहीं हैं। आप स्वयंभू है।

हे देव! महानिर्यामक भी आप ही हैं। जिसका किनारा अदृश्य है और जिसकी गहराई अथाह है, ऐसा है यह भयंकर संसार समुद्र! जीवन जहाज में आसीन होकर हम इस संसार में आगे बढ़ रहे हैं। चारों गतियों के जीव हमारे साथ हैं। कुशल निर्यामक—नाविक ही इस जीवन नैया को पार लगा सकता है। वही हमें उस पार पहुँचा सकता है। आप ही तो हैं, इन चतुर्गति के जीवों के जीवन जहाज को पार लगाने वाले महानिर्यामक, समर्थ और दक्ष नाविक!

हे देव! आप सचमुच महासार्थवाह भी हैं। इष्ट स्थान के अभिलाषी असहाय जीवों को साथ दे कर निस्वार्थ भाव से गन्तव्य की तरफ गतिमान होने की प्रेरणा देनेवाले आप ही तो हैं। जिसने आपका आश्रय ले लिया, वह सचमुच अभिष्ट पा गया और उसने उससे अपना साध्य भी सिद्ध कर लिया।

— जैनाचार्य श्रीमद् जयन्तसेनसूरि 'मधुकर'

क्रोध मानसिक रोग का, उदित करे विज्ञान ।
जयन्तसेन रहे नहीं, मर्यादा का ज्ञान ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org